बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 253

सहज हो आय कर ढांचा

वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने गत सप्ताह संकेत दिया कि सरकार व्यक्तिगत आय कर दरों को कम करने और कहीं अधिक तार्किक बनाने पर विचार कर रही है। सरकार ऐसा आर्थिक वृद्धि को प्रोत्साहित करने के लिए उठाए जा रहे कदमों के तहत कर सकती है। स्मरण रहे कि वित्त वर्ष की दूसरी तिमाही में आर्थिक वृद्धि दर घटकर 4.5 फीसदी रह गई है। सरकार को आगामी बजट में आय कर को संशोधित कर और तार्किक बनाना चाहिए। इसकी तमाम वजह हैं। उदाहरण के लिए इससे पहले सरकार ने कॉर्पोरेशन कर दर में कमी की है जिसके बाद यह तार्किक कदम होगा। इससे प्रत्यक्ष कर सुधार की प्रक्रिया और आगे ले जाई जा सकेगी। कर ढांचे को सहज बनाने से मध्यम से दीर्घ अवधि में कर संग्रह में सुधार की संभावना बढ़ती है। दूसरा, इससे करदाताओं की अन्य श्रेणी के लिए कर को तार्किक बनाने और विसंगति दूर करने में मदद मिलेगी।

उदाहरण के लिए दिवंगत अरुण जेटली ने 2018 के अपने बजट भाषण में कहा था कि आकलन वर्ष 2016-17 में वेतनभोगी लोगों ने औसतन 76,306 हजार रुपये का कर चुकाया जबकि पेशवरों तथा व्यक्तिगत कारोबारी करदाताओं के मामले में यह औसतन 25,753 रुपये था। यहां तक कि समेकित स्तर पर भी वेतनभोगी लोगों का कर संग्रह व्यक्तिगत कारोबारी करदाताओं और पेशेवरों द्वारा चुकाये गए कर का तीन गुना तक था। तीसरा, व्यक्तिगत करदाताओं के लिए कर दर कम करने से उनकी खर्च करने लायक आय में इजाफा होगा और खपत में सुधार होगा। हालांकि संपूर्ण अर्थव्यवस्था पर इसका प्रभाव सीमित हो सकता है क्योंकि व्यक्तिगत करदाताओं की तादाद बहुत ज्यादा नहीं है।

यकीनन सरकार प्रत्यक्ष कर कानूनों की समीक्षा करने वाले कार्य बल की रिपोर्ट जारी करती तो अच्छा रहता। इससे इस विषय पर और अधिक जानकारीपरक बहस हो पाती। इससे सरकार भी सुधार प्रक्रिया को आगे ले जाने के मामले में कहीं अधिक बेहतर स्थिति में रहती। व्यापक स्तर पर देखें तो एक ओर जहां व्यक्तिगत आय कर दर को तार्किक बनाने की बात उचित है, वहीं यह भी ध्यान रखना होगा कि सरकार राजस्व संग्रह के मोर्चे पर कठिन स्थिति में है और उसे बेहद बारीक संतुलन साधना होगा। दरों में उल्लेखनीय कटौती राजस्व पर बुरा असर डाल सकती है और सरकार की राजकोषीय स्थिति और बिगड़ सकती है। ज्यादातर विश्लेषक मानते हैं कि सरकार के लिए इस राजकोषीय घाटे को जीडीपी के 3.3 फीसदी के तय लक्ष्य के भीतर रखना लगभग असंभव है। चूंकि अर्थव्यवस्था में निकट भविष्य में कोई बड़ा सुधार होता नहीं दिखता इसलिए राजस्व संग्रह अगले वर्ष भी दबाव में रह सकता है।

ऐसे में विसंगतियों को समाप्त करने और रियायतों को तार्किक बनाने पर ध्यान देना चाहिए। इसमें कर दरें भी शामिल हैं। ऐसा करने से राजस्व संग्रहण पर पड़ने वाले असर को न्यूनतम किया जा सकेगा। जुलाई के बजट में सरकार ने अत्यधिक अमीर करदाताओं पर अधिभार बढ़ा दिया था। इससे आय कर ढांचा और जटिल हो गया। ऐसे उपायों से बचा जाना चाहिए। एक छोटे समूह के लिए कर दरों में अहम वृद्धि कर वंचना की संभावना बढ़ाती है। यह भी निश्चित नहीं है कि आय कर दर में कटौती से व्यय बढ़ेगा ही क्योंकि कठिन वक्त में लोग बचत करना चाहते हैं। तार्किक कर दर वाली सहज व्यवस्था में अनुपालन में सुधार और संग्रह के आधार में इजाफा अवश्य हो सकता है। इस बीच सरकार को कर विभाग में संस्थागत क्षमता बढ़ाने पर भी विचार करना चाहिए। इस दौरान तकनीक का बेहतर इस्तेमाल कर कर वंचना पर निगरानी रखनी चाहिए। इससे राजस्व संग्रहण में बेहतरी आएगी और ईमानदार करदाताओं पर से दबाव कम होगा।

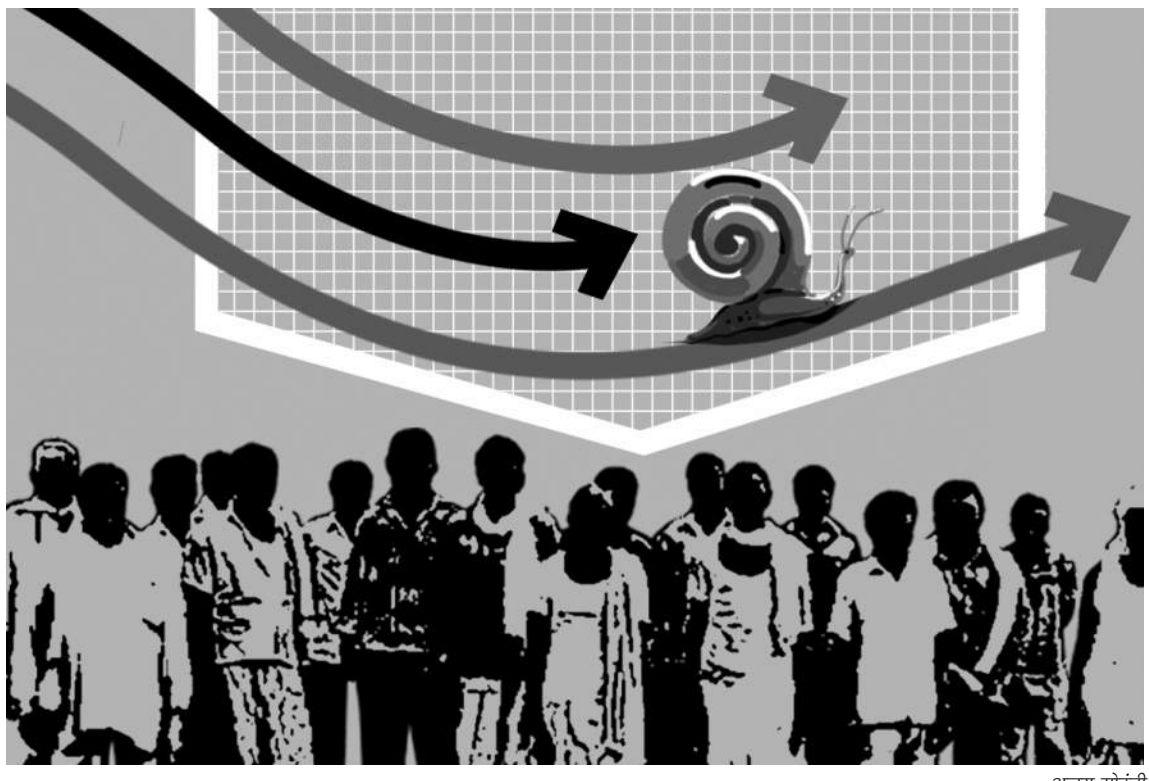

अजय मोहंती

मांग, आपूर्ति और वृद्धि में धीमापन

यदि देश को विकास के क्षेत्र में बदलाव लाना है तो घरेलू मांग को व्यापक और समावेशी बनाने को पहली प्राथमिकता देनी होगी। इस विषय पर विस्तार से अपनी राय दे रहे हैं **रथिन रॉय**

देश में इस बात पर बहस चल रही है कि क्या मौजूदा मंदी मांग अथवा आपूर्ति बाधित अर्थव्यवस्था को परिलक्षित कर रही है। विश्लेषण किया जाए तो यह सवाल तब उठता है जब मंदी की प्रकृति चक्रीय हो। यदि समेकित मांग कुल उत्पादन क्षमता से कम हो तो अर्थव्यवस्था मांग बाधित होती है। परंतु यदि समेकित मांग के बावजूद वास्तविक उत्पादन, उत्पादन क्षमता से कम हो तो इसे आपूर्ति क्षेत्र की बाधा वाली मंदी कहा जा सकता है।

ढांचागत मंदी अधिक जटिल होती है। विकासशील देशों में ऐसी मंदी के लिए विशिष्ट कारकों को उत्तरदायी ठहराया जाता है। इनमें बुनियादी ढांचे की कमी, अत्यधिक नियमन आदि प्रमुख हैं। लेकिन मांग और आपूर्ति के कारक भी उतने ही उत्तरदायी होते हैं।

मांग उस मूल्य से संबंधित होती जिस पर वस्तुओं और सेवाओं की पेशकश की जाती है। आपूर्ति क्षेत्र की बाधाओं के कारण कीमतें इतनी अधिक हो सकती हैं कि समेकित मांग कम हो जाए। यह तब होता है जब ये बाधाएं उत्पादकता कम करती हैं और इसलिए कीमत इतनी ज्यादा हो जाए कि वृद्धि को समर्थन देने के लिए जरूरी मांग ही तैयार न हो पाए। व्यापार में कोई बाधा न होने से ऐसी मांग की पूर्ति बढ़े हुए आयात के माध्यम से भी की जा सकती है। इससे घरेलू उत्पादन और वृद्धि को कोई मदद नहीं मिलेगी।

मैं भारत में इसे कुछ इस प्रकार घटित होते देखता हूं। वर्ष 1991 के बाद से भारत की वृद्धि की गाथा कमोबेश कभी निर्यात आधारित नहीं रही है। इसे गति प्रदान करने में घरेलू खपत और निवेश मांग की अहम भूमिका रही। संक्षेप में कहा जाए तो देश के शीर्ष 15 करोड़ लोग जिन जिंस का उपयोग करते हैं उनकी कीमतों में 1991 के बाद से गिरावट आई है। इस क्षेत्र की आबादी की आय से तुलना करके देखें तो उन वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों में निरंतर गिरावट आई है जिन्हें आर्थिक वृद्धि का प्रमुख संकेतक माना जाता है। इनमें कारें, दैनिक उपयोग की उपभोक्ता वस्तुएं, हवाई यात्राएं आदि शामिल हैं।

इस गिरावट की प्रमुख वजह हैं उदारीकरण, बढ़ती आय और पूंजीगत लाभ। इन क्षेत्रों को उपलब्ध उपभोक्ता और उत्पादक ऋण भी इसकी वजह है। जैसा कि मैंने पहले भी कहा था। इस बात के प्रमाण हैं कि इस क्षेत्र से मांग वृद्धि छीज रही है।

बहरहाल ढांचागत अवरोध अभी उन वस्तुओं की समेकित मांग को सीमित किए हुए है जिनका उपभोग देश की अगली 30 करोड़ की आबादी करती है। वस्त्र आयात की बात करें तो बांग्लादेश और वियतनाम से होने वाला कपड़े का आयात देश की समेकित मांग की पूर्ति कर देता है। ऐसा इसलिए क्योंकि घरेलू उद्योग उच्च मेहनताने क्षेत्रों से कम वेतन वाले उत्तरी और पूर्वी भारत का रुख नहीं कर पा रहा है। सरकार देश की सबसे बड़ी भूस्वामी है लेकिन इसके बावजूद खासतौर पर शहरों में नियामकीय और संस्थागत बाधाएं इतनी हैं कि वे जमीन का इस्तेमाल कर सस्ते आवास बनाने की संभावनाओं को सीमित करती हैं। न्यूनतम आय पर गुजारा कर रहे भारतीय बिना सब्सिडी के बेहतर शिक्षा और स्वास्थ्य नहीं पा सकते।

ऐसे में न्यूनतम आय अर्जित करने वाले लोग जिन चीजों को खरीदने की आकांक्षा रखते हैं उनकी मांग इसलिए जोर नहीं पकड़ पाती क्योंकि आपूर्ति क्षेत्र की बाधाओं ने कीमतों को बढ़ा रखा है।

लॉजिस्टिक्स की बढ़ी हुई लागत, महंगी और अविश्वसनीय ऊर्जा आपूर्ति, मानव संसाधन में कम निवेश, शोध एवं विकास पर पर्याप्त ध्यान न देने और निष्प्रभावी और मनमाने नियमन और प्रशासन के साथ राजकोषीय और ऋण नीतियों के सुसंगत नहीं होने से भी उत्पादकता में कमी की समस्या को बढ़ावा मिलता है। इससे लागत बढ़ती है और इन वस्तुओं और सेवाओं का गुणवत्तापूर्ण उत्पादन प्रभावित होता है।

सार्वजनिक नीति के जरिये दी जाने वाली प्रतिक्रिया भी संतोषजनक नहीं रही है। गरीब और न्यूनतम मेहनताना अर्जित करने वालों को खराब गुणवत्ता की सब्सिडी वाली वस्तुओं से ही संतोष करना पड़ता है। इससे वृद्धि को भी कोई सहायता नहीं मिलती। बल्कि इससे लेनदेन की लागत बढ़ती है और दुर्लभ संसाधनों तक पहुंच में प्राथमिकता की चाह भी। यही कारण है कि अफसरशाह और नेताओं को एम्स में चिकित्सा सुविधा, सस्ती दरों पर बेहतरीन निजी स्वास्थ्य सेवा और गुणवत्तापूर्ण सार्वजनिक आवास जैसी सुविधाओं में प्राथमिकता प्रदान की जाती है।

मौजूदा मंदी को कई टीकाकारों ने वित्तीय और ऋण बाजार के तमाम ढांचागत झटकों से जोड़ा है। इसे मध्यम अवधि के निवेश-ऋण रिश्तों की कमी भी माना गया जिसने मध्यम अवधि में देश की वृद्धि दर का निर्धारण किया है। कई आकलन बताते हैं कि बेहतर ऋण सुविधा, नकदी और निवेश को आकर्षक बनाने से हालात सुधर सकते हैं। इन दलीलों में दम है लेकिन मेरी नजर में मौजूदा मंदी में इस बात के संकेत निहित हैं कि देश की वृद्धि गाथा की ढांचागत कमजोरी को दूर करना आवश्यक है भले ही यह प्राथमिक कारण नहीं दिख रहा हो।

मैंने कहीं और यह दलील भी दी थी कि मंदी से निपटने के लिए अल्पावधि के उपाय अधिक आवश्यक हैं। सरकार ने इस दिशा में प्रयास भी किए हैं। मैंने यह सुझाव भी दिया था कि ढांचागत मौद्रिक और ऋण नीति के उपायों को अपनाकर भी इस दिशा में प्रयास किया जा सकता है।

परंतु अगर भारत को अपनी विकास अवस्था में बदलाव लाना है तो उसे कहीं अधिक व्यापक और समावेशी घरेलू मांग को महत्ता प्रदान करनी होगी। यह मध्यम अवधि का काम है लेकिन इसके क्रियान्वयन की शुरुआत अल्पावधि के उपायों से होनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया गया तो अल्पावधि के उपाय मुद्रास्फीतिजनित मंदी की वजह बनेंगे। भारत को ऐसी आय और औद्योगिक नीतियां तैयार करने की आवश्यकता है जो कहीं अधिक व्यापक और समावेशी वृद्धि प्रक्रिया तय करें। ऐसा करके ही हम सफल बदलाव हासिल कर पाएंगे और मध्यम आय के जाल में फंसने से भी बच सकेंगे। इस समस्या पर ध्यान न देने वाले कई देश ऐसे जाल में फंस चुके हैं।

श्रम नीति में किए गए सुधार से अर्थव्यवस्था पर बड़ा असर

दिल्ली डायरी

ए के भट्टाचार्य

भारत की श्रम नीति ने एक नया कलेवर धारण कर लिया है। अब चार श्रम संहिताएं सार्वजनिक रूप से उपलब्ध हैं। ये पारिश्रमिक संहिता, पेशागत सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कामकाजी हालात संहिता, औद्योगिक संबंध संहिता और सामाजिक सुरक्षा संहिता हैं। पारिश्रमिक संहिता को गत अगस्त की शुरुआत में संसद ने पारित कर दिया था और औद्योगिक संबंध संहिता को गत 28 नवंबर को लोकसभा में पेश किया गया है। पेशागत सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कामकाजी हालात संहिता को गत जुलाई में लोकसभा में पेश किया गया था लेकिन उसे अक्टूबर में संसद की स्थायी समिति को भेज दिया गया। संसदीय समिति की रिपोर्ट अगले महीने आने की संभावना है। केंद्रीय मंत्रिमंडल ने सामाजिक सुरक्षा संहिता के प्रारूप को गत 4 दिसंबर को मंजूरी दी है और इसे जल्द ही संसद में पेश किया जा सकता है।

इन चारों संहिताओं में कुल 28 श्रम कानूनों को समाहित किया गया है। इनमें से 13 कानून पेशागत सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कामकाजी हालात संहिता, आठ कानून सामाजिक सुरक्षा संहिता, चार कानून पारिश्रमिक संहिता और तीन कानून औद्योगिक संबंध संहिता में समाहित किए गए हैं।

यह एक लंबा सफर था जो भारत में आर्थिक सुधारों की धीमी रफ्तार को बयां करता है। दूसरे श्रम आयोग ने वाजपेयी सरकार के समय जून 2002 में रिपोर्ट सौंपी थी। उसने सुझाव दिया था कि मौजूदा श्रम कानूनों को मिलाकर पांच बड़े समूह बनाए जाने चाहिए। आयोग ने औद्योगिक संबंध, पारिश्रमिक, सामाजिक सुरक्षा, सुरक्षा और कल्याण एवं कामकाजी हालात पर समूह गठित करने को कहा था। लेकिन रिपोर्ट सौंपे जाने के 17 साल तक विशेषज्ञ एवं अफसरशाह इन सुझावों के असर को लेकर चर्चा करते रहे। यह सिलसिला तीन सरकारों तक चलता रहा। इन लंबी चर्चाओं से यह भी पता चला कि सरकारें भी राजनीतिक रूप से विवादास्पद कानून बनाने को लेकर सशंकित हैं। खुद मोदी सरकार भी अपने दूसरे कार्यकाल में जाकर श्रम कानूनों को चार समूहों में वर्गीकृत करने का फैसला ले पाई। हालांकि आयोग के सुझाव को पूरी तरह मानने के बजाय सरकार ने सुरक्षा, कल्याण एवं कामकाजी हालात पर बने कानूनों को एक ही संहिता में रख दिया है।

श्रम नीति की चारों संहिताएं अर्थव्यवस्था के एक अहम क्षेत्र में सुधारों की स्थिति के बारे में क्या बताती हैं? इस पूरी कवायद के चार अहम निहितार्थ हैं। पहला, केंद्र सरकार ने श्रम नीति एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र में खुद की भूमिका कम कर दी है। पारिश्रमिक संहिता वेतन संबंधी नीतियां तय करने में केंद्र की भूमिका को केवल रेलवे, खनन एवं तेल तक ही सीमित करता है। बाकी सभी क्षेत्रों में राज्यों को पारिश्रमिक से जुड़ी नीतियां तय करने की स्वतंत्रता दी गई है। इसका मतलब है कि विभिन्न उद्योगों के लिए मजदूरी तय करने वाले तमाम केंद्रीय कानून अब प्रभावी नहीं रहेंगे। इसी तरह न्यूनतम वेतन के मुद्दे पर केंद्र एवं राज्य अपने-अपने मजदूरी स्तर तय कर सकते हैं लेकिन वह देश के भीतर अलग इलाकों के लिए निर्धारित वेतन से कम नहीं हो सकता है।

दूसरा, नए कानूनों ने श्रम विभाग के निरीक्षकों की शक्तियों को काफी कम कर दिया है। मसलन, पारिश्रमिक संहिता सुनिश्चित करता है कि उल्लंघन के मामलों में अभियोजन की प्रक्रिया शुरू होने के पहले निरीक्षक-सह-समन्वयक नियोक्ता को एक अवसर देगा। निरीक्षक अभियोजन कार्यवाही तभी शुरू कर सकता है जब पांच वर्षों के भीतर वही उल्लंघन दोहराया जाए। सामाजिक सुरक्षा संहिता के प्रारूप में भविष्य निधि के दस्तावेज मंगाने की निरीक्षकों की शक्ति पर भी पांच वर्षों की समय-सीमा रखी गई है। उस समय के बाद निरीक्षक ऐसे रिकॉर्ड तलब नहीं कर सकते हैं।

तीसरा, नई श्रम नीति में अधिसूचनाओं पर निर्भरता की प्रवृत्ति देखी गई है जिससे संसद के विधि-निर्माता शायद खुश नहीं होंगे। असल में, औद्योगिक संबंध संहिता में उन पुराने प्रावधानों को कायम रखा गया है जिसमें 100 से अधिक कर्मचारियों वाले औद्योगिक प्रतिष्ठानों के नियोक्ता के लिए छंटनी या बंदी करते समय केंद्र या राज्य सरकार की पूर्व-अनुमति लेना जरूरी किया गया है। लेकिन अब इसके साथ केंद्र एवं राज्य सरकारों को यह छूट भी दी गई है कि वे अधिसूचना जारी कर प्रतिष्ठानों में कार्यरत श्रमिकों की न्यूनतम संख्या तय कर सकते हैं। इसी तरह सामाजिक सुरक्षा संहिता का मसौदा सरकार को यह छूट देता है कि वह अधिसूचना जारी कर कर्मचारी भविष्य निधि संगठन (ईपीएफओ) या कर्मचारी राज्य बीमा निगम (ईएसआईसी) के दायरे में आने वाले संगठन की सीमा बदल सकती है।

चौथा, नई श्रम नीति ने कर्मचारियों की नई श्रेणियों को समाहित करने के लिए कानून का दायरा बढ़ाने की गुंजाइश काफी अधिक कर दी है। औद्योगिक संबंध संहिता तय अवधि वाले कर्मचारियों की भी बात करती है और यह सुनिश्चित करती है कि उन्हें भी समान कार्य करने वाले नियमित कर्मचारियों की तरह सामाजिक सुरक्षा एवं पारिश्रमिक के सभी लाभ मिले। पेशागत सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कामकाजी हालात संहिता रंगमंच, फिल्म, मनोरंजन एवं मीडिया जैसे नए क्षेत्रों पर भी लागू होगी। सामाजिक सुरक्षा संहिता के मसौदे में ग्रैच्युटी एवं बीमा लाभ तय अवधि वाले कर्मचारियों को भी देने का प्रावधान है। मोबाइल ऐप से संचालित होने वाले उद्योगों में भी सक्रिय कर्मचारी इस कानून के दायरे में होंगे। नई अर्थव्यवस्था वाली उबर, ओला या स्विगी जैसी कंपनियों के कर्मचारियों को भी इस प्रावधान का लाभ मिलेगा।

भारतीय अर्थव्यवस्था पर श्रम नीति में हो रहे इन बड़े बदलावों का असर पड़ना तय है। लेकिन कुछ वर्षों बाद ही यह पता चल पाएगा कि ये बदलाव किस तरह असर डालते हैं।

कानाफूसी

ब्रिटेन : बोरिस को जिताना है

ब्रिटेन में चल रहे चुनाव प्रचार अभियान ने सोमवार को उस वक्त देसी मोड़ ले लिया जब एक वीडियो सामने आया जिसमें प्रधानमंत्री बोरिस जॉनसन को सारी समस्याओं का एक मात्र हल बताया गया था। वीडियो के बोल थे, 'बोरिस को हमें जिताना है, इस देश को बचाना है।' माना जा रहा है कि हिंदी का यह गीत वहां रहने वाले 15 लाख प्रवासी भारतीयों में से ही किसी समूह ने तैयार किया है। इस वीडियो में ज्यादातर तस्वीरें जॉनसन की और कुछेक तस्वीरें विपक्षी नेता जेरेमी कॉर्बिन की शमिल हैं। कॉर्बिन को वीडियो में झूठा बताया गया है। अब यह वीडियो भारतीय समुदाय के लोगों को आकर्षित कर पाएगा अथवा नहीं यह तो देखना होगा लेकिन फिलहाल तो यह लोगों के बीच मनोरंजन का एक साधन बना हुआ है।

अनूठा विरोध

प्याज की लगातार बढ़ती कीमतें समाचारों की सुर्खियां बनी हुई हैं। देश के कुछ जगहों में प्याज के दाम 100 रुपये से 200 रुपये तक पहुंच गए हैं। राजधानी दिल्ली में भी प्याज के दाम 100 रुपये तक पहुंच चुके हैं। सोमवार को जब कांग्रेस पार्टी सबसे लंबे समय तक अध्यक्ष पद पर रहने वाली नेत्री सोनिया गांधी का जन्मदिन मना रही थी उस वक्त पार्टी के एक नेता और पुदुच्चेरी के मुख्यमंत्री वी नारायणसामी ने केंद्र सरकार के प्याज कीमतें नियंत्रित नहीं रख पाने को लेकर विरोध प्रदर्शन करना तय किया। उन्होंने पार्टी की महिला कार्यकर्ताओं को प्याज के पैकेट तोहफे में दिए और केंद्र सरकार की निष्क्रियता की आलोचना की। पार्टी कार्यकर्ताओं के अलावा वहां से गुजर रहे अन्य लोगों को भी प्याज के आधा-आधा किलो के पैकेट तोहफे में मिले। गौरतलब है कि बेमौसम बारिश से फसल नुकसान और प्याज की आवक की कमी के कारण प्याज के दाम इन दिनों काफी बढ़े हुए हैं।

आपका पक्ष

सुरक्षा के लिए जरूरी नागरिकता विधेयक

संसद में सोमवार की रात को नागरिकता संशोधन विधेयक पारित हो गया है। गृह मंत्री अमित शाह द्वारा पेश इस विधेयक में अफगानिस्तान, बांग्लादेश और पाकिस्तान से धार्मिक प्रताड़ना के कारण भारत आए हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और ईसाई समुदाय के लोगों को भारतीय नागरिकता मिल सकेगी। विधेयक में कहा गया है कि अवैध प्रवासी जो 31 दिसंबर, 2014 तक भारत में प्रवेश कर चुके हैं उनके लिए नागरिकता देने की व्यवस्था की जाएगी। संसद में इस विधेयक के पेश होने पर काफी हंगामा हुआ। विपक्षी दलों का कहना है कि धर्म के आधार पर नागरिकता देना उचित नहीं है। जिसके जवाब में गृह मंत्री ने कहा कि इस्लामिक देशों में मुस्लिम समुदाय के लोग कैसे पीड़ित हो सकते हैं। असम में इस विधेयक को लेकर बंद का आह्वान किया गया है। इस विधेयक के खिलाफ वहां काफी विरोध प्रदर्शन हो रहा है। सबसे बड़ा सवाल है कि इस विधेयक की जरूरत क्यों पड़ी। आजादी के समय भारत के तीन टुकड़े हुए जिसमें पाकिस्तान और पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लदेश) का गठन हुआ। भारत धर्म निरपेक्ष देश बना जिसमें सभी धर्मों को समान अधिकार दिए गए। लेकिन पाकिस्तान और बांग्लादेश इस्लाम धर्म का देश बना जहां अन्य समुदाय एवं धर्मों के लोगों को प्रताड़ित किया जाने लगा। धार्मिक प्रताड़ना से बचने के लिए ऐसे लोगों में से कुछ ने भारत में शरण ली लेकिन उन्हें यहां की नागरिकता नहीं मिल सकी। इसके अलावा भारत में पाकिस्तान और बांग्लादेश से काफी घुसपैठ होने लगी है। इससे देश की सुरक्षा को खतरा होने लगा था। पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर से आतंकी घुसपैठ कर कश्मीर में आतंकी गतिविधियों को अंजाम देते हैं। अब देश में हर व्यक्ति की सही पहचान होगी तथा आतंकियों की पहचान भी हो सकेगी। नागरिकता संशोधन विधेयक देश की सुरक्षा के लिहाज से भी सही है।

राजेश कुमार, नई दिल्ली

सोमवार की रात को लोकसभा में नागरिकता संशोधन विधेयक पारित हुआ *-पीटीआई*

सांसदों का सब्सिडी छोड़ना सराहनीय

संसद के कैंटीन में खाद्य वस्तुओं पर मिलने वाली सब्सिडी को सांसदों द्वारा छोड़ा जाना सराहनीय पहल है। सभी सांसदों द्वारा सर्व सम्मति से कैंटीन की सब्सिडी छोड़ने का निर्णय लिया गया है। यह निर्णय लोकसभा अध्यक्ष के सुझाव के बाद लिया गया। सांसदों द्वारा सब्सिडी छोड़ने से सालाना 17 करोड़ रुपये बचाये जा सकेंगे। सांसदों द्वारा स्वेच्छा से सब्सिडी छोड़ने के निर्णय लिए जाने के बाद उन्हें अन्य मदों में मिलने वाली सब्सिडी भी छोड़ने की पहल करनी चाहिए। सांसदों को यात्रा करने पर रेलवे तथा हवाई यात्रा में भी छूट मिलती है। उन्हें इन सभी पर मिलने वाली छूट को स्वेच्छा से छोड़ देना चाहिए। आरंभ में सांसदों के वेतन भत्ते काफी कम थे इसलिए उन्हें कुछ चीजों पर रियायत मिलती थी। आज उनके वेतन भत्ते सम्मानजनक स्तर पर पहुंच चुके हैं। ऐसे में उन्हें ऐसी मिलने वाली छूट या रियायतों से परहेज करना चाहिए। सांसद आवास के रखरखाव में भी काफी खर्च होता है। अगर देश के सांसद बचत की पहल करेंगे तो उस राशि का देश के विकास कार्यों में अहम योगदान होगा।

प्रियंका कुमारी, नोएडा

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।